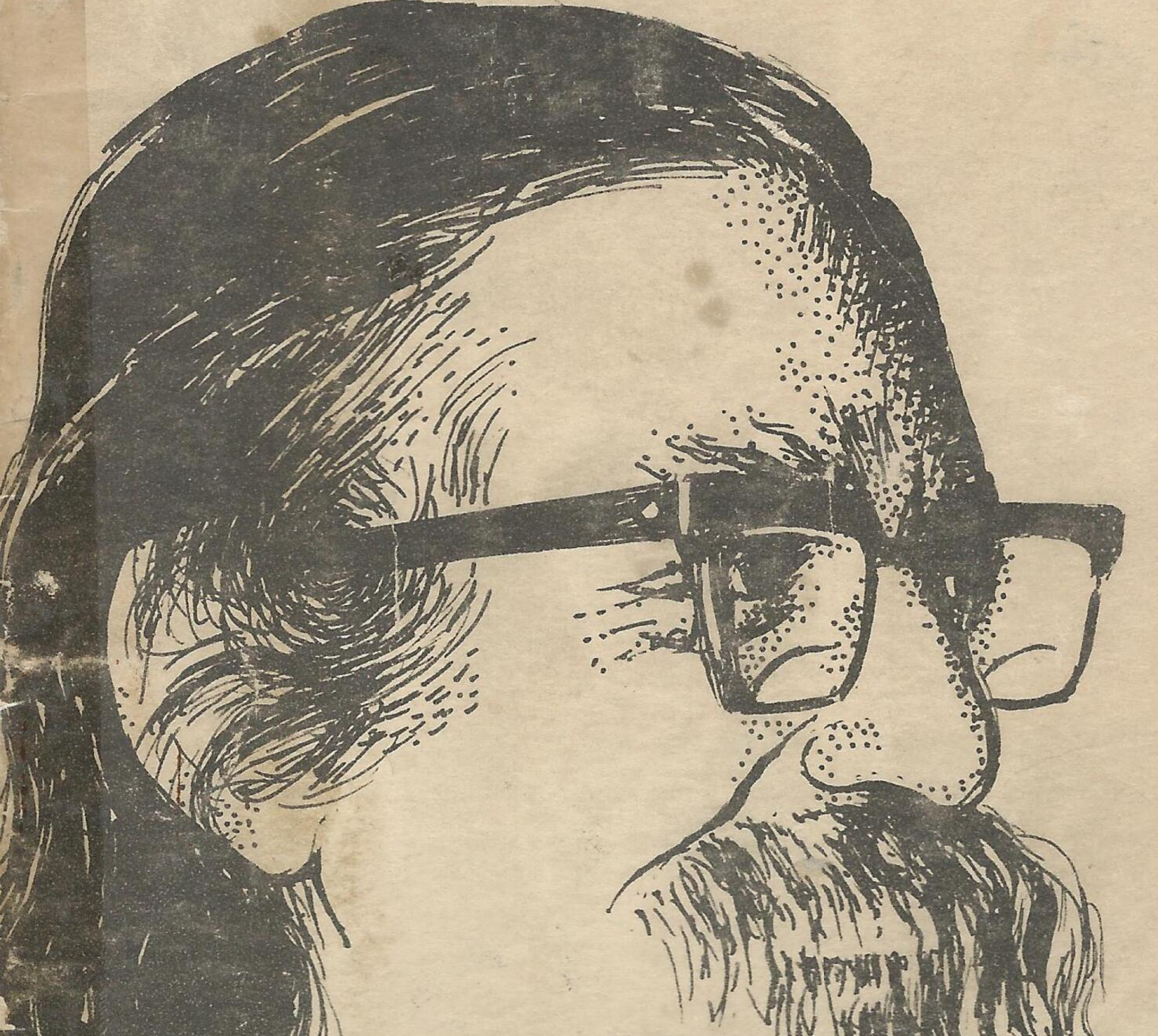

केन्द्र [illegible] कालय
[illegible], पाली

नवदधीचि

प. पू. श्री गुरुजी की मृत्यु के तेरहवें दिन बडौदा में भारतीय मजदूर संघ के महामंत्री
श्री दत्तोपंत ठेंगडी श्रद्धांजलि भाषण करते हुये

दाहिनेसे : श्री बाबुभाई ओझा (नगर संघचालक) डॉ. कनुभाई त्रिवेदी (जिल्हा संघचाल

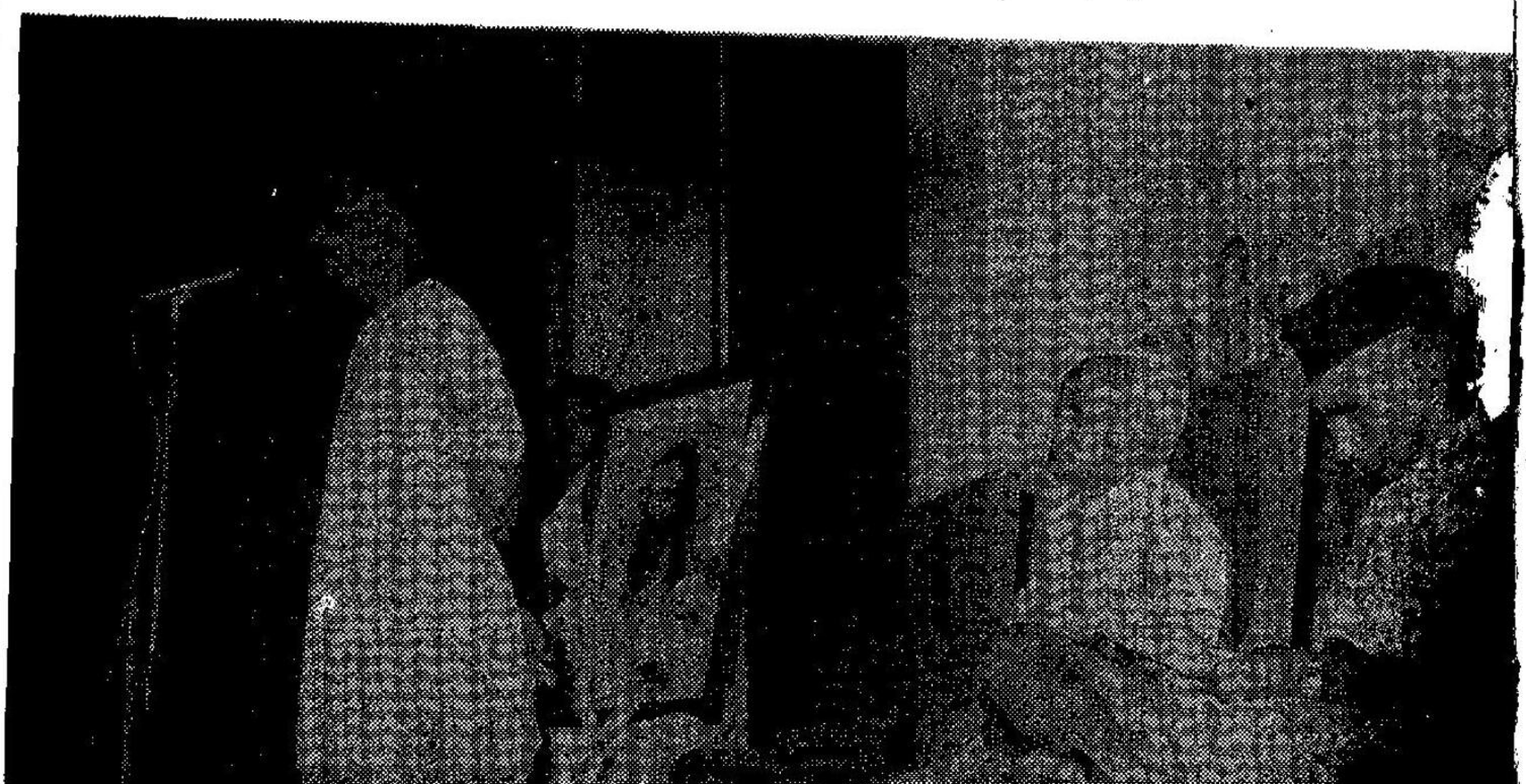

केशव माधव पुस्तकालय
सोमनाथ मन्दिर के पास, पाली

निवेदन

अनेक गुजराती प्रकाशनोंके बाद हिन्दीमें पुस्तक प्रकाशित करनेका "मधु" का यह प्रथम प्रयास है। बड़ौदामें आयोजित कार्यक्रममें मा. श्री. दत्तोपंतजी ठेंगडी द्वारा प. पू. श्री गुरुजीको दी गयी श्रद्धांजलि " नवदधीचि " पाठकोंको समर्पित है।

यह लिखित पुस्तक नहीं, परन्तु भाषण है अतः उसकी मर्यादा समझकर तथा हिन्दीका हमारा यह प्रथम प्रयास होनेके कारण यदि कुछ क्षतियाँ रही हो तो पाठक हमें क्षमा करेंगे।

रक्षाबन्धन —प्रकाशक

१३–८–१९७३

प्रकाशक :
चंपकलाल सुखडीआ
६६, चौटापुल
सूरत-१.

मूल्य ०-७५ पैसा

रक्षाबन्धन
वि. सं. २०२९

मुद्रक :
मनसुखलाल एम. राणा,
श्री 'महेश्वर प्रिन्टींग प्रेस'
नवापुरा करवारोड
सूरत-१.

नवदधीचि

जहाँ तक मुझे स्मरण है, दो साल पहले यहाँके अपने स्वयंसेवक बन्धुओंके साथ बातचीत करनेका अवसर प्राप्त हुआ था। किन्तु, जिन परिस्थितियोंमें आज यहाँ हमारा एकत्रीकरण हो रहा है, यह बिलकुल भिन्न है।

इस समय सभी लोगोंके मनमें उत्कट भावनायें हैं; और उसे ठीक शब्दोंमें प्रकट करना कठिन है, यह बात भी सब लोग जानते हैं। एक पंक्ति मैंने पढ़ी थी, "खामोशी गुनगुना रही है; आज बेजवाँ है जबाँ मेरी।" आज मेरी वाणी मूक हो गयी है ऐसा कवि कहता है। शायद आज यही भावना हममेंसे हरेकके हृदयमें है। प. पू. श्री गुरुजी, उनका पार्थिव शरीर आज हमारे बीचसे निकल गया है। यह तो एक ऐसी घटना है जिसे प्रत्यक्ष देखनेके बाद भी मन उस पर विश्वास नहीं करता। हम सबके लिये श्री गुरुजी हमारे बीच नहीं है, यह कल्पना करना भी कठिन है, किन्तु यह एक सत्य घटना है। दिनांक पांच जूनको रातके नौ बजकर पाँच मिनट पर श्री गुरुजीने महानिर्वाण किया। संयोगवश पूर्व नियोजित कार्यक्रमके अनुसार उसी दिन २–३० बजे दोपहरमें मैं वहाँ पहुँचा था, किन्तु प्रत्यक्ष महानिर्वाणके समय मैं उपस्थित नहीं था। वर्गमें चला गया था और कारण यही था कि उसी दिन उन्हें कुछ होगा ऐसा किसीने सोचा नहीं था। अवस्था नाजुक है यह तो सब देख रहे थे। लेकिन इस तरह कि अंतिम अवस्था पहले भी आयी थी, और इसी लिये उसी रातको ऐसा कुछ होगा ऐसा सोचा नहीं गया था। मैं वर्गमें था, वहाँ यह समाचार मिला।

आखिरी चाय

दोपहर ३–०० बजेसे सायं ७–४५ तक श्री गुरुजीके पास मुझे बैठनेका अवसर प्राप्त हुआ था। पीड़ा तो बहुत थी। लेकिन उस अवस्थामें भी जो लोग उन्हें मिलने आते थे उनके साथ बात करनेकी प्रवृत्ति, उनका कुशल मंगल पूछने कि प्रवृत्ति, यह दूसरेको गुमराह

करनेवाली थी। उस दिन दोपहरके ३-३० बजे जिन लोगोंके साथ श्री गुरुजी कि आखिरी चाय हुई, उस समय हम ४-५ लोग कार्यालयमें उपस्थित थे। उसी समय उनसे मिलनेके लिये अमदावादके परिवारके लोग वहाँ आये थे। श्री महेश महेता और श्री सुभाष महेता तथा उनकी पत्नियाँ, जो अभी Newyork में हैं, यहाँ उनकी भतीजीके विवाहके अवसर पर आये थे। वे सपरिवार श्री गुरुजीके दर्शनके लिये आये थे। वे चायके समय वहाँ थे। उस समय श्री गुरुजीको Hard breathing—श्वास लेनेमें बहुत कष्ट हो रहा था। हम लोगोंको बाहरसे ही सूचना थी "बोलिये, मत।" किन्तु जैसे ये लोग अंदर आकर बैठे श्री गुरुजीने पूछा, "क्यों भाई, तुम लोग विवाहके निमित्त आये थे, अभी कितने दिन यहाँ रहोगे?" फिरसे पूछा, "आप न्यूयार्कमें रहनेवाले हैं या हिन्दुस्तानमें आनेवाले हैं?" उन्होंने कहा, "हम हिन्दुस्तान आनेवाले हैं। श्री गुरुजीने आगे जानना चाहा, सर्विस करोगे या कारखाना?" उन्होंने कारखाना निकालेंगे ऐसा उत्तर दिया। तो गुरुजीने पूछा, "प्लास्टिकका ही न?" श्री महेताने उस पर कहा "हाँ प्लास्टिकका ही।" बडौदामें ही निकालोगे न?" उन्होंने कहाँ 'हाँ।' जब जोरका Pulpitation चल रहा हो, बोलनेमें भारी कष्ट होता हो ऐसे समयका यह प्रसंग है। इतनेमें चाय आयी। चाय देनेवाले जो अपने स्वयंसेवक थे, वे सबको चाय देने लगे। महेता परिवार नागपुरके अपने स्वयंसेवक प्रेमजीभाईके यहाँ ठहरा था, वे साथमें थे। जब स्वयंसेवक श्री प्रेमजीभाईके सामने चाय रखने लगा, श्री गुरुजीने कहा, "प्रेमजीभाई चाय नहीं लेते, उनके लिये दूध या तो शरबत जैसा कुछ लाओ"। प्रेमजीभाई कोई संघके बड़े अधिकारी नहीं है। सार्वजनिक जीवनमें कोई बड़े व्यक्ति भी नहीं है। किन्तु श्री गुरुजीके मनमें छोटेसे स्वयंसेवकके साथ भी जो अपनापन है उसका यह परिचायक है। जब श्वास लेनेमें भी बड़ी पीड़ा हो रही थी, अपनेको संभालना भी बड़ा कठिन था, प्रेमजीभाई चाय नहीं लेते इस बातका स्मरण रखना, छोटा सा प्रसंग हैं,

परंतु अपने परिचयमें आनेवाले सब लोगोंके प्रति उनके मनमें जो आत्मीयता रहती थी इसका यह द्योतक है।

मृत्युका स्वागत कैसे करोगे?

बादमें सब लोगोंको बडा दुःख हुआ। वे अपने बारेमें तो कुछ नहीं, हमारी पूछताछ करते रहते हैं। यह जो उनका अन्तिम निवास नागपुरमें था उस समय लोगोंको कष्ट न हो इसलिये वे अपनी पीड़ा, अपने कष्ट किसीको बताते नहीं थे। आखिरी दिनोंमें लगातार कई दिन तक वे रातको बिस्तर पर सोये नहीं, कुर्सी पर बैठे रहते थे; यह लोगोंको कई दिनोंके बाद Accinently पता चला। उन्होंने स्वयम् अपनी ओरसे बताया नहीं। कितनी भी पीड़ा हो, जो कोई मिलने आता, उनसे पूछते, "भाई तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा है?" ऐसे ही वे अपनी पीड़ाको बरदाश्त करते रहे। जिस ढंगसे उन्होंने वह सारी पीड़ा सही, लगता है हम सब लोगोंको सबक ही सिखा गये कि किस तरह मृत्युका स्वागत करना चाहिए। खड़े होनेमें भी उनको कष्ट होता था। खड़े होकर बैठनेमें उनको दम लगता था। ज्यादा देर तक खड़े नहीं हो सकते थे तो भी आखिर तक प्रार्थनाका आग्रह नहीं छोड़ा; बिलकुल आखरी दिन तक जब खड़े होकर प्रार्थना करना सम्भव नहीं हुआ, तब बैठकर प्रार्थना की। भारत माताकी जय कहा। यही थे उनके अन्तिम शब्द। बिलकुल आखिरी दिन तक, वह एक अन्तिम दिन छोड़ दिया तो, बड़े कष्ट बर्दाश्त करते हुए भी प्रार्थना बराबर करते रहे। यह जो सारा उनका व्यवहार रहा, मुझे लगता है कि हम लोगोंको उन्होंने अपने जीवन-कालमें, जीवन किस तरह जीना चाहिए यह सिखाया, मृत्युमें यह भी सिखाया कि मृत्युका स्वागत किस तरह करना चाहिए। यह बात सही है कि हम सब स्वयंसेवकोंको यह जो अन्तिम समाचार है वह कुछ धक्का देनेवाला था। क्योंकि थोड़े ही दिन पूर्व समाचार आया था कि श्री गुरुजीकी तबियत अच्छी हो रही है। तृतीय वर्षके संघ शिक्षा वर्गमें

आये हुए स्वयंसेवकोंसे वे प्रान्तशः मुलाकात करते रहे । बातचीत करते रहे । Terrace में उनका घूमना भी चालू था और इन समाचारोंके बाद एकदम यह दु:खद समाचार सुननेकी मन:स्थितिमें हम नहीं थे । सुबह डॉ. आबासाहेब थत्तेको उन्होंने कहा, 'भाई, मालुम होता है कि आखरी घण्टी बज रही है । हमेशा जब वे कुर्सी पर बैठे रहते थे उनका कमण्डलु बाँई ओर रखते थे । केवल प्रवास पर जाते समय दांये हाथ कमण्डलु लेकर जानेकी उनकी प्रथा थी। लेकिन उस दिन सुबहसे ही, अपना कमण्डलु हमेशाकी तरह बाँई ओर न रखकर दाईं ओर रखा । जो बात उनके अन्तःवासियोंको कुछ असामान्य जैसी— हमेशा जैसी नहीं लगी । उस दिन जब श्री गुरुजीकी तकलीफ बढने लगी, डॉक्टर लोगोंने एक सुझाव दिया "श्री गुरुजी अगर नर्सिंग होममें शिफ्ट हों तो अच्छा रहेगा।" वैसे तो थोडे ही दिन पूर्व श्री गुरुजीने निश्चयसे कहा था, "मैं कार्यालयको तब तक नहीं छोड़नेवाला हूँ, जब तक मैं नीचे जाकर प्रार्थना करने की अवस्थामें नहीं आता, या दौरे पर जानेकी अवस्थामें नहीं आता । तब तक मैं कहीं नहीं आऊँगा।" ऐसा उन्होंने निश्चयपूर्वक कहा था । इसीलिये डॉक्टरोंने डरते डरते कहा था, "अच्छा होगा अगर नर्सिग होममें शिफ्ट हों तो।" परंतु इस पर श्री गुरुजीने हँसकर पूछा, "डॉ. जोशीके नर्सिग होममें ?" "हाँ वहाँ जायेंगे तो अच्छा रहेगा।" फिर उन्होंने हँस दिया और कहा, "अच्छा भाई, कल देखेंगे।" वास्तवमें वे एकदम इस बातको Reject ही करेंगे ऐसा सब लोग सोचते थे । लेकिन जिस ढंगसे उन्होंने इस बातको लिया, डॉक्टर लोगोंको थोडा विचित्र सा लगा । उनके लिये ऊँचा नीचा किया जा सके ऐसा फाउलरकॉट लाने की बात की। उन्होंने कहा, "भाई जरूरत क्या है ?।" Cot लायी गई। वह Cot जब तैयार हो रही थी वे हँस रहे थे । उन्होंने उसका स्पर्श भी नहीं किया। उस पर बैठे भी नहीं। और भी कुछ घटनाएँ ऐसी रहीं, जिसके कारण पार्थिव शरीरमें उनका अंतिम दिन होनेका उनको ज्ञान हो गया था।

चार कदम आगे बढ़कर...

तबियत कुछ अच्छी हो रही है, एकदम खराब हो गई—यह बात तो ठीक है। लेकिन तबियत जिस समय कुछ अच्छी हुई थी, उनके मनमें कुछ पीड़ा थी। वे सोचते थे, कहते भी थे, "भाई, यह शरीर अब इतना जरजर हो गया है, सामान्य व्यवहारमें भी दूसरोंकी सहायता लेनी पड़ती है। इस तरह जीनेमें क्या फ़ायदा है?" यह बात उनके मनमें रहती थी और समयअसमय प्रगट भी होती थी। इसलिए ऐसा लगता है कि प. पू. गुरुजीने यह मान लिया था कि अंतिम घड़ी निकट है। हो सकता है उन्होंने भी इस पर कुछ विचार किया हो। मृत्यु स्वाभाविक रूपसे उनकी ओर चार कदम आगे बढ़कर आयी थी या वे स्वयम् चार कदम आगे बढकर मृत्युसे हस्तमेलाप करने गये थे। स्वातंत्र्यवीर सावरकरजीका स्वर्गवास जिस ढंगसे हुआ था, उसे उन्होंने 'प्रायोपवेशन' कहा। स्वयं धीरे धीरे सब चीजें छोड़कर मृत्युके सामने पेश होना, क्या ऐसा यह मामला नहीं था? इतना ही था कि सावरकरजीने घोषणा की थी, उन्होंने नहीं की। ऐसा तो कुछ मामला नहीं था? यह अन्वेषणका विषय हो सकता है।

मित्र, पिता, कर्ता

उनके चले जानेसे सारे देश पर दु:ख और शोककी गहरी छाया फैल गई है। किसका कितना नुकसान हुआ, क्या क्षति हुई, यह बताना बड़ा कठिन है। क्योंकि क्या स्वयंसेवक, क्या Non-Swayamsevak ऐसे असंख्य लोग थे, जिनके साथ उनके प्रेमके, आत्मीयताके संबन्ध थे। सार्वजनिक जीवनमें नेता और अनुयायी या तो नेता और उनके प्रशंसक ऐसा कहा जाता है। वे नेता नहीं थे हमारे लिये। सभी स्वयंसेवकोंको तथा बहारके समाजके लोगोंको भी वे बड़े भाई या पिताके समान लगते थे। हरेकके सुख दु:खमें वे सुखी और दु:खी होते थे।

असंख्य लोग ऐसे थे, जो अपनी व्यक्तिगत और पारिवारिक सुख दुःखकी बात व्यक्तिगत रूपसे या पत्र लिखकर उनको बताते थे और उनसे प्रेरणा, मार्गदर्शन तथा सांत्वना पाते थे--ऐसे असंख्य लोग थे। मुझे लगता है कि पिछले सौ वर्षोंमें शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जिसका व्यक्तिगत पत्र व्यवहार इतना बड़ा हो और यह सारा व्यक्तिगत पत्र व्यवहार वे अपने ही हाथोंसे करते थे। आखिर तक, जिस दिन महाप्रयाण किया उस दिन भी पत्र लिखे। वास्तवमें सब सुविधायें थीं। कार्यालयमें टाइपराइटर थे, steno थे, सब कुछ था, लेकिन एक एक व्यक्तिको जो पत्र जायेगा उसमें मेरा और उसका व्यक्तिगत संबन्ध है, बीचमें टाइपराइटर की आवश्यकता नहीं, इस दृष्टिसे हरेक पत्र स्वयं अपने ही हाथोंसे लिखते थे। मुझे तो ऐसा निश्चयपूर्वक लगता है कि ऐसा दूसरा व्यक्ति नहीं होगा। हरेकके साथ व्यक्तिगत सम्बन्ध हो--इस दृष्टिसे कई परिवार थे। कहीं विवाह जमाते, कहीं पारिवारिक Partition के झगड़े निपटाते, कहीं मध्यस्थता करते, ऐसी कई घटनायें हैं और ऐसे कई परिवार है जिनमें उन्होंने परिवारके कर्ता पुरुषके नाते काम किया। मानो इतने लाखों परिवारोंको— अपना कर्ता पुरुष अपने बीचसे आज निकल गया है, ऐसी भावना हो रही है। राजा रघुके बारेमें कहा गया कि रघुराजा वास्तवमें सबका पिता था। जिन्होंने जन्म दिया वे तो केवल जन्मके लिए हेतु मात्र थे, वास्तवमें पिता तो रघुराजा ही था, रघुवंशमें कहा गया है: **स पिता पितरस्तातां, केवलं जन्म हेतवो** ऐसा कहा है। श्री गुरुजीके बारेमें ऐसी जिनकी धारणा थी ऐसे ऐसे असंख्य परिबार हिन्दुस्तानमें हैं। लाखों परिवार, यानि असंख्य लोगोंका मित्र, पिता, कर्ता—यह सारी भूमिका उनमें एकत्रित थी। सम्मिलित श्रेष्ठ व्यक्तितत्व होते हुए भी, सबके साथ उनके स्तर पर आकर बातचीत करते थे। बाल स्वयंसेवकोंको भी दूरत्वका अनुभव नहीं हुआ। His genius was versatile. He could talk with persons from different walks of life in the language

they could understand. In Feb 1946 while talking to an eminent Doctor at Calcutta, who doubted the efficiency of R. S. S. technique in achieving the professed objective Shri Guruji asked, 'Out of what material the then Master drug of Allopathy i. e. Pennicillin was prepared ?" "Out of the waste, stinking food" The Doctor replied. "Does it not mean that even the worst thing can yield the best results at the hands of the experts ?" asked shri Guraji. And after receiving the affirmative answer from the flalbergasted Doctor, he immediately added, "and here we are the experts in the Science of Organisation." What is organisation ? How it differs from a mere crowd ? To a scientist he explained that it was a differance between a chemical compound and a mechanical mixture.

Explaining to some farmers of Vidarbha the concept of 'Nationalism' he used the analogy of 'Crop and weed, in the same form to indicate the respective roles of the patriots and the strangers residing here but not yet identified with the main stream of national life.

To a lawyer karyawaha he advised the policy of 'Factum Vatet' in case of an erring but repenting Swayamsevak of his shakha. And to a Professor steeped in the traditional knowledge he told during his last sickness that he had taken the 'kshetra sanyasa'—concept which only an expert culturist can understand.

अजानता महिमानं तवेदं........

मैं एक समय उनके साथ था । छोटा स्वयंसेवक–उसको शिशु स्वयंसेवक ही कहना चाहिए–हम उसके वहाँ कारमें गये थे। वह स्वयंसेवक सामने आया और एकाएक पूछता है, "क्यों रे ! यह तेरी

कार है ?" उसको पता ही नहीं था कि तुम्हारी, आपकी वगैरह कहना चाहिए। उन्होंने कहा, "हां !" "तो अब इसमें बैठकर तू जानेवाला है ?" शिशुके पूछने पर प. पू. गुरुजीने कहा, "हां जरुर जाऊँगा ।" अभी यह बात तो छोटीसी है। एक शिशु स्वयंसेवक बिलकुल निर्भीक चित्तसे आत्मीयतासे उन्हें, "क्या यह तेरी कार है" ऐसा पूछ सकता है। ऐसे कितने बड़े लोग हिन्दुस्तानमें होंगे जिनके साथ छोटासा शिशु भी इस तरह बात कर सकता हो ? एक Prophetके बारेमें कहा गया, उन्होंने कहा, बच्चोंको मेरे पास आनेसे मत रोको"। प. पू. गुरुजीका यही हाल था और इसी कारण बच्चोंको भी लगता था कि यह अपना खेलका एक साथी है, जिसके साथ बात कर सकते हैं, मजाक कर सकते हैं।

अब यह बच्चोंको ही लगता था ऐसी बात नहीं। हम लोग जो उम्रसे बड़े हो गये हैं, उनके साथ रहते थे, भूल ही जाते थे कि वे क्या हैं। ऐसा लगता था कि अपने साथ बातचीत करनेवालोंमेंसे एक हैं, थोड़ा-सा बड़ा हो गये तो उससे क्या है ? यानि अपने बड़प्पनका आभास उन्होंने अपनी बातचीत या व्यवहारमें कभी भी नहीं आने दिया और इसलिये जब कभी प्रसंगवशात् उनके श्रेष्ठत्वका एकदम साक्षात्कार होता था, वह प्रगट होता था, हम सब लोगों की भावना ठीक अर्जुनके जैसी हो जाती थी, जैसे विराट विश्वरूप दर्शनके पश्चात अर्जुनने कहा, चाहे प्रेमसे हो या गलतीसे हो, मैंने हे कृष्ण ! हे सखा ! हे यादव ! ऐसा Singular में ही पुकारा, मैंने बराबरीके नाते आपसे बात की, यह तुम्हारे श्रेष्ठत्वको न जान सकनेके कारण मेरी गलती हुई है; इसलिये भगवान मुझे क्षमा करो। **सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हे कृष्ण हे यादव हे सखेति। अजानता महिमानं तवेदं, मया प्रमादात्प्रणयेन वापि ॥** ठीक हम लोग भी ऐसा अनुभव करते हैं। कभी पता ही नहीं लगा उनके बड़प्पनका, श्रेष्ठत्वका। सच्चा श्रेष्ठत्व वहीं है जो स्वयं अपनेको भूल जाता है। कभी यह ख्याल तक नहीं कि वे अन्य लोगोंसे कुछ श्रेष्ठ हैं।

केशव माधव पुस्तकालय
[illegible]

जिसके साथ बात करते थे उसके साथ एकात्म होकर बात करते थे। इसके कारण सभी उम्रके, सभी स्तरके लोगोंसे इतनी आत्मीयता उन्होंने प्राप्तकी कि किसका कितना नुकसान हुआ यह कहना कठिन है। व्यक्तिगत रूपसे लाखो परिवारोंको नुकसान हुआ है। कई लोगोंको केवल उनके पास जाकर बैठनेसे सांत्वना मिलती थी, मार्गदर्शन मिलता था। अब यह सब कैसे होगा? इस रिक्तता की पूर्ति कैसे होगी? यह विचार सबके मनमें है। मार्गदर्शन व्यक्तियोंको था, परिवारोंको था, विभिन्न संस्थाओंको भी था; कितनी संस्थाओंको था इसकी गिनती करना कठिन है।

मात्र हिंदू ही नहीं

आज तो सार्वजनिक जीवनमें थोड़ासा भी किसीने काम किया तो एकदम प्रसिद्धीके पीछे जाते हैं। छोटी-सी घटना हुई तो एकदम प्रसिद्धी कर देते है। यहाँ तो प्रसिद्धीका नाम नहीं। लोगोंको यहाँ तक पता नहीं कि कितने लोगोंके साथ श्री गुरुजीका प्रत्यक्ष संबन्ध था, कितनी संस्थाओंके साथ था। कभी प्रसिद्धीके पीछे नहीं गये। उनकी अंतिम बिमारीमें भी उनकी प्रसिद्धीपरांगमुखताका यह अनुभव आया। महाराष्ट्रके मुख्यमंत्री श्री वसंतराव नाईक उनसे मिलनेके लिये आये। वहाँ बातचीत हुई। यह बात अखबारोंमें नहीं आई, संघ कार्यालयके समाचारमें भी नहीं थी। नहीं तो हमने ऐसे लोग देखे हैं, कोई भी आते हैं तो खटाकसे समाचार छप जाता हैं कि फलां फलां आये थे। अप्रैलके अंतमें Socialist Partyके प्रधान George Fernandesका चिंता और शुभेच्छा व्यक्त करनेवाला पत्र आया था। कहीं भी उसका जिक्र नहीं। विभिन्न लोगोंके मनमें इस तरह की आत्मीयताकी भावना थी। केवल हिन्दुओंमें ही थी ऐसा नहीं। लोगोंको कल्पना नहीं होगी उतने अहिन्दुओंसे उनका आत्मीयतापूर्ण संपर्क था। राज्यसभामें जानेके पश्चात मुझे यह अनुभव हुआ। Mr. जोकिम आलवा और उनकी पत्नी Madam Violet Alwa—जो राज्यसभाकी Deputy Chairman थीं, जब कभी राज्यसभाका पहला Session शुरू होता

था वे यही प्रश्न पूछते—"क्यों भाई! नागपुरसे आ रहे हो?" हमने कहा, "हाँ, नागपुरसे आ रहा हूँ।" "तो गुरुजीकी तबियत कैसी है?" यह पृच्छा होती रही। अभी जब समाचार आया था कि प. पू. गुरुजीका स्वास्थ्य अच्छा हो रहा है, तब उन्होंने कहा था, "समाचार विश्वसनीय नहीं लगता। एक बात है, श्री गुरुजीको London ले जानेके लिये मेरा सुझाव है; और आवश्यक सभी सुविधा कर देनेको मैं तैयार हूँ।"

महमदअली भी अनाथ

गुरुजीके मृत्युके पश्चातका एक प्रसंग है। मैं जब INTUC में काम करता था श्री महंमदअली नामके सज्जनसे मित्रता हुई थी। वह कार्यालयमें पहुँचा, तो लोगोंको लगा यह यहाँ क्यों आ गया? वह तो गुरुजीको अंतिम दर्शनके लिये जहाँ रखे गये थे वह स्थान देखने आया था। बाहर आया तो रोने लगा। कहने लगा, "जब कभी आते थे, बड़े प्रेमसे, आत्मीयतासे पूछते थे, क्या है, कैसा है? बच्चोंकी पढ़ाई कैसी चल रही है? दुकान कैसी चलती है? तो हमें ऐसा लगता था कि उनका हाथ हमारे सर पर है। अब हम अनाथ हो गये।" ऐसे कई उदाहरण हैं। अन्य संस्थाओंको भी ऐसा ही लगा है। एकने तो कहा R. S. S. is not Orphaned. R. S. S.में तो सरसंघचालक है ही इसलिये यह तो संभव नहीं। परंतु कई लोगोंको जरूर ऐसा लगा है कि They are Orphaned। विभिन्न संस्थाओंके कार्यकर्ताओंके विविध कार्योंसे उनका संपर्क था। पर वे केबल संघकार्यमें ही थे। सभी कार्योंमें मार्गदर्शन करते थे, परंतु वे स्वयं किसीमें नहीं थे। विभिन्न क्षेत्रोंमें कार्य करनेवालोंका मार्गदर्शक गया। उनकी छत्रछाया गयी ऐसा सभीको लगेगा। कितना नुकसान हुआ यह कहा नहीं जा सकता।

वज्रादपि कठोराणि......

जहाँ तक R. S. S. का संबन्ध है, संघ और गुरूजीका यह द्वैत समाप्त हुआ था। गुरुजी यानि संघ, संघ यानि गुरुजी। बहुत विस्तृत

बताने की आवश्यकता नहीं। प. पू. डोक्टरजीसे जो सूत्र हाथमें लिया था, ३३ साल तक लगातार, अखण्ड भ्रमण—, **'चरैवेति' 'चरैवेति'**—, का वास्तवमें निर्वाह करते हुए, एक कोनेसे दूसरे कोने तक समस्त देशका भ्रमण लगातार किसीने किया होगा तो श्री गुरुजीने। और कितनी ही आपत्तियोंसे टकराना पड़, किन्तु मनका संतुलन न खोते हुए, देशके प्रति जो अविचल श्रद्धा है उसके कारण, हम जो सोच रहे है वही सही है, उसीमें राष्ट्रका हित है यह दृढ़ निष्ठा होनेके कारण, अपने चरित्रके आधार पर महान संकटोंमें भी उन्होंने इस नैयाको किस तरह निकाला यह विस्तृत करके बताने की कोई आवश्यकता नहीं है। अपने ध्येयके विषयमें स्पष्ट धारणा, और ध्येयका जहाँ तक संबन्ध है किसी भी तरहका समझौता करने की तैयारी नहीं, व्यक्तिगत बातोंमें मृदुतम— सिद्धांतोंके विषयमें कठोरतम; जैसे कहा जाता है, **वज्रादपि कठोराणि, मृदुनी कुसुमादपि**—वज्रसे भी, कठोर और, फूलोंसे भी कोमल। 'Where ever the national interest was concerned, he never left any thing to chance. He was strict disciplinarian.

During the I. N. A. disturbances at Calcutta a learned visitor asked him about his reaction to the style of revolt that was being organised there. Without a moment's delay he took out Shakespeare's 'Julius caesar' from the near by shelf and pointed out the speach of Antony after the furious mob proceeds to attack Brutus. "Mischief, thou art afoot; now take what course thou wilt." Underlining the words "thou wilt" he said, "here we differ; not "thou wilt"; it ought to be "we wilt."

लोकप्रियता नहीं, राष्ट्रहित

१९४७ के पश्चात् हिन्दुस्तानके सार्वजनिक जीवनका इतिहास देखिये। इस सार्वजनिक जीवनके मंच पर आये हुए जो विभिन्न मत हैं;

राजनैतिक या गैरराजनैतिक, इन सब मतोंका अभिनय किस प्रकार हुआ-है हम देखें। सबके मनमें एक ही कामना है लोकप्रियता प्राप्त करनी चाहिए। परंतु, लोकप्रियता प्राप्त करनेके लिए सिद्धांतोंमें भी समझौता करने की तैयारी, आज एक बात कहेंगे, कल दूसरी बात। मानो संपूर्ण सार्वजनिक जीवनका उनका लक्ष्य be all and end all यह लोकप्रियता संपादित करना ही है। फिर चाहे वह Power —सत्ता प्राप्त करनेके लिए हो या सस्ती लोकप्रियताके लिए ही हो। लेकिन गुरुजीका ऐसा नहीं था। जो बात राष्ट्रहितमें सही दिखाई देती है, परंतु जनमानस दूसरा होनेके कारण वह बात रखनेसे जनतामें अप्रियता प्राप्त होगी, जनताके रोषका भाजन होना पड़ेगा, फिर भी वे नहीं डिगते थे। जनताके रोषको स्वीकार करनेकी हिम्मतके साथ उन्होंने राष्ट्रहितकी ही बात कही। जनतामें अप्रियता मिलेगी परंतु राष्ट्रहितके लिए कोई बात आवश्यक है तो मुझे जनताके सामने रखना, स्पष्ट रुपसे रखना; निःसंदिग्ध रुपसे रखना, यह काम शायद ही पिछले २५ वर्षोंमें किसीने किया होगा। १९४८के पहले एक महापुरुष थे, वे इस तरहका काम करते थे। उनके पश्चात् शायद अन्य और कोई नहीं जिसने यह काम इतनी कट्टरतासे किया होगा। सत्य और असत्यके लिये उन्होंने केवल भगवानको साक्षी रखा। बहुमत अल्पमतकी उन्होंने कभी फिक्र नहीं की। और इसी कारण कई बार जन-मानसकी एक लहर उनके खिलाफ उठी है ऐसा हमने देखा है। जिस समय संयुक्त महाराष्ट्रका आंदोलन चल रहा था, उस समय बम्बईमें जाकर यह स्पष्ट कहना कि यदि Linguistic states-भाषाके आधार पर राज्योंकी रचना राष्ट्रके लिये हानिकारक है। यह बड़े साहस की बात थी। जिस समय पंजावमें गैर सिक्ख सभी हिन्दु विभिन्न दलोंने, राजनैतिक लालचमें आकर अपना Vote—मत बढ़ानेके लिये, हमारी मातृभाषा पंजाबी नहीं हिन्दी है ऐसा लिखवाना चाहिए, ऐसा कहा, उस समय सब लोगोंका रोष स्वीकार करते हुए भी स्पष्ट रूपसे गुरुजीने

कहा, पंजाबी हमारी भाषा है, अतः जो पंजाबी हैं उन्हें पंजाबी लिखवानी चाहिये—लोगोंमें रोष फैला ही था ।

किंग नहीं, ऋषि

कभी कभी लोकप्रियताको व्यक्तित्वके श्रेष्ठत्वका मापदंड माना जाता है। बड़ा सस्ता है। ऐसा माना जाता है कि जो सर्वाधिक लोकप्रिय होगा वही व्यक्ति सर्वश्रेष्ठ है। लेकिन ऐसा यदि मान लिया तो इसमें कई कठिनाइयाँ आती है। कई लोग सत्तापर होते हैं तो सर्वाधिक लोकप्रिय प्रतीत होते हैं, पर जब वे सत्तासे हट जाते हैं तो कोई पूछता नहीं; सब भूल जाते हैं। लोग दूसरे व्यक्तिको अर्थात् उगते सूर्यको प्रणाम करते हैं। **Authority forgets the dying king** यह king के बारेमें कहा गया है, ऋषिके बारेमें नहीं। इसलिये तत्कालीन लोकप्रियताको श्रेष्ठताके मापदंडके रूपमें स्वीकार किया तो बड़ा कठिन होगा। श्रेष्ठताका परिचायक अगर तत्कालीन लोकप्रियता होती है, तो श्री गुरुजीके सत्य भाषणके कारण जनताके रोषकी, असन्तोषकी लहर उनके विरुद्ध उठती है तो उन्हें श्रेष्ठ नहीं माना जाना चाहिए। यदि ऐसा होता तो हमारे राष्ट्रके मान्यवर क्रान्तिकारी शहीद जिन्होंने देशके लिये आत्मबलिदान किये उनकी तुलनामें राजकपूरको ज्यादा लोकप्रिय और श्रेष्ठ मानना चाहिये। राजकपूर आ जाये तो जितनी भीड़ होगी, शायद सरदार भगतसिंह भी दुबारा आ जाये तो इतनी भीड़ नहीं होगी ऐसा लगता है। लेकिन लोकप्रियता स्थायी मापदंड नहीं। Socrates जिसका नाम आज दुनियामें चलता है, उसके विषयमें कहा जाता है कि उसके समकालीन लोगोंने उसे मृत्युदंडकी सजा दी थी। Hemlock नामका जहर देकर उसको मरवाया था। समकालीन लोगोंका रोष या गलतफहमी यदि व्यक्तिको श्रेष्ठ होनेसे वंचित रखती है तो Socratesको श्रेष्ठ नहीं माना जाता, लोग उसके खिलाफ हो गये थे; लेकिन आज दुनियामें Socratesका नाम है, उसे विष देनेवालेका नाम नहीं। जीससका उदाहरण हम जानते है, जीससको शूली पर चढ़ाया था। उसके

समकालीन लोग उसके खिलाफ थे, यहाँ तक की सब लोगोंके सामने Choice आया था, एक ओर जीसस है और एक ओर चोर—डकैत है, और शूली एक ही है, तब जीससको शूली पर चढ़ाया गया। लेकिन आज जीससको जिन्होंने शूली पर चढ़ाया उनको तथा बच जानेवाले डकैतको कोई नहीं जानता जिसको लोगोंने शूली पर चढ़ा दिया उसीका दुनियामें बोलबाला चल रहा है। जिस महम्मद साहबको आगे चलकर संपूर्ण अरेबियाने मसीहाके रूपमें स्वीकार किया, उनको एक समय उन्हींके जन्मस्थान मक्काके लोग जानसे मार डालनेके लिए प्रवृत्त हुए थे। एक प्रेषितने कहा है, "No Prophet is worshiped in his own Land."

Most Misunderstood

ईमर्सनने कहा है, "To be great is to be misunderstood.।" कई श्रेष्ठ पुरुषोंके जीवनमें ऐसे प्रसंग आये हैं। श्री गुरुजीके बारेमें समय समय पर गलत फहमी फैलायी गई, इसको यदि ख्यालमें रखा तो ऐसा लगता है, He is in a good company। लेकिन यह मापदंड श्रेष्ठताका नहीं हो सकता। एक नेताका कहा हुआ यदि माना जाये तो मूल्यांकन बदल जायेगा। उन्होंने कहा कि श्रेष्ठताका मापदंड है The extent of difficulties Surmounted—हमारे यहाँ ही नहीं, विदेशोंमें भी श्रेष्ठत्वका मूल्यांकन किस ढंगसे किया जा सकता है इसकी स्पष्ट कल्पना है।

एक बार अपने वर्धा जिला संघ चालकजी पू. अप्पाजी जोशीकी बातचीत महात्माजीसे चली। अभीकी और स्थायी लोकप्रियताकी दृष्टिसे यह उदाहरण है। अप्पाजी जब युवा थे, संघ की स्थापना भी नहीं हुई थी तब उन्होंने महात्माजीसे यह प्रश्न पूछा। उन्होंने उत्तर दिया देखो, तुमने दो नाम सुने है Julius और Jesus. Julius सम्राट थे आज दुनियामें उनके कितने अनुयायी है यह देखो, और Jesus फकीर थे, आज दुनियामें उनके कितने अनुयायी है, कौन

केशव माधव पुस्तकालय

श्रेष्ठ है ?—स्थायी मापदंड बहुत अलग होते हैं। इसलिये आज लोग प. पू. गुरुजीका सही मूल्यांकन नहीं कर पायेंगे। परंतु, समय, उनके व्यक्तित्वको, कर्तृत्वको, तपश्चर्याको, पूरी तरहसे न्याय देगा इसमें कोई सन्देह नहीं।

कई पुरुष प्रसिद्धीके कारण श्रेष्ठ प्रतीत होते हैं वे पहाड़के समान होते हैं। कहते हैं जो पहाड़ दूरसे ही मनोरम्य दिखते हैं और यदि उनके नजदीक जाते हैं तो उनका असली रूप कांटे पथ्थरवाला नजर आता है।

अन्य धर्मोंके प्रति आदर

यहाँ बिलकुल उल्टा मामला था। जितना नजदीक जाओगे उतना व्यक्तित्वका मनोहर सौन्दर्य अधिकाधिक आकृष्ट करता था। उनके बारेमें अनेक गलत बातें फैलाई गई है। जैसे एकबार अकारण ऐसा प्रचार किया गया की वे अहिन्दुओंके विरोधक हैं। बिलकुल गलत बात है। गुरुजीने स्पष्ट रूपसे कहा है की हम सभी धर्मोंके बारेमें आदरकी भावना रखते हैं। सभी आध्यात्मिक महापुरुषोंके विषयमें उनके मनमें सम्मानकी भावना थी। एकबारकी घटना है–कार्यकर्ताओंके मार्गदर्शनके लिये एक पुस्तिका लिखी गई। उसे प्रकाशित करना था। उसमें सद्गुणोंके उदाहरणोंके नाते महम्मद साहब और ईसा मसीहके जीवनकी कुछ घटनाओंका निर्देश था। इस तरहकी पुस्तिका प्रकाशित करना श्री गुरुजीको कहाँ तक अच्छा लगेगा ऐसा प्रश्न हमारे एक मित्रके मनमें पैदा हुआ। उन्होंने श्री गुरुजीसे सीधे ही पूछ लिया। श्री गुरुजीने कहा, "इसमें क्या आपत्ति है ? महम्मद और ईसा दोनों ही श्रेष्ठ धार्मिक महापुरुष थे। उनके जीवनकी घटनाएँ उदाहरणके स्वरूप सबके सामने रखना अच्छा ही है।" महम्मदी मत या कुरान या महम्मद साहबसे उनकी कोई शिकायत नहीं थी। इन श्रेष्ठ तत्त्वों और व्यक्तियोंका नाम लेकर अपना राजनैतिक स्वार्थ सिद्ध करनेके लिए यहाँके मुसलमानोंको अराष्ट्रीय बनानेके प्रयासका उन्होंने विरोध किया। महम्मदी मतका पूरी तरह पालन करते

हुए भी यहाँका मुसलमान पूरी तरहसे राष्ट्रीय हो सकता है, ऐसा उसमें होना चाहिए, यही उनका आग्रह था। पारसीयोंको तो वे अग्निपूजक हिन्दू ही मानते थे। कोई कुरान पढ़ सकता है, कोई बाइबिल पढ़ सकता है; कोई मस्जिदमें तो कोई गीरजाधरमें जा सकता है। उपासनाका पूरा स्वातंत्र्य है। हमारे धर्मकी यही विशेषता रही है। आप वेद पढ़िए, कुरान पढ़िए, बाइबील पढ़िए, किन्तु इस राष्ट्रके साथ एकात्म होकर रहीये। इस भारतको माताके नाते प्रणाम करना चाहिए। यहाँकी संस्कृति और परंपराके साथ एकात्म होना चाहिए। यहाँके महापुरुषोंको अपना राष्ट्रीय महापुरुष मानना चाहिए। कुरान भी पढ़ सकते हो और गीरजाधर भी जा सकते हो।

संघ याने समग्र राष्ट्र

कई बार उनकी प्रसिद्धीपराङ्गमुखता के कारण कुछ टीकाएँ होती थी। ऐसा लगता है कि अन्य कोई नेता होता तो बहुत कुछ प्रसिद्धी प्राप्त भी होती। स्वयं बढ़कर प्रसिद्धीसे दूर रहनेके कारण इस प्रकारकी भ्रांतियाँ फैल सकती है। कई लोगोंने कहा कि, "हाँ भाई! श्री गुरुजीकी तपश्चर्या बड़ी थी लेकिन देशका पूरा चित्र, पूरा विचार उनके सामने नहीं था। वे केवल संघका ही विचार करते थे।" यह कहनेवाले नहीं जानते हैं कि **R. S. S.** यह कोई दल नहीं, संस्था नहीं, पंथ–संप्रदाय नहीं, समाजके अन्तर्गत खड़ा किया हुआ एक संगठन भी नहीं, जैसे प. पू. डोक्टरजी तथा श्री गुरुजीका विचार है, 'संघ यानि समग्र राष्ट्र' और इसी दृष्टिसे समग्र समाजके विषयमें उनके मनमें चिंता थी। समाजका जो शोषित, दलित, पीड़ित हिस्सा है, उसकी हालत देखकर उनके मनमें बड़ी पीड़ा होती थी। मैं और हमारे कुछ कार्यकर्ता जो संघमें है, उनसे ही प्रेरणा लेकर मजदूर संघमें कार्य करते हैं। और भी लोग विश्वहिन्दू परिषदमें गये हैं, वनवासी क्षेत्रमें जाकर बसे हैं और उनकी सेवा कर रहे हैं, जहाँ कोई प्रसिद्धी नहीं, समाचार नहीं,

रेडियो नहीं; और भिन्न-भिन्न क्षेत्रमें जाकर प्रचार कर रहे हैं, उन सभी लोगोंने श्रीगुरुजीसे ही प्रेरणा प्राप्त की है।

मुझे स्मरण होता है कि उनके विचार कितने स्पष्ट थे! अलग-अलग क्षेत्रोंके विषयमें भी विचार कितने स्पष्ट थे! मैं INTUC (इन्टक)में था। इन्टकके एक अधिवेशनमें, जमशेदपुरमें, जनरल काउन्सीलमें मेरा निर्वाचीन हुआ। मैंने वापिस आकर श्रीगुरुजीको बताया कि मैं चुना गया हूँ। मनमें बड़ा आनन्द था। तब उन्होंने पूछा, "क्यों! बड़ा समाधान हो रहा है?" मैंने कुछ कहा नहीं—हो ही रहा था। उन्होंने आगे पूछा, "अच्छा, बताओ किस Constituencyसे तुम्हारा चुनाव हुआ है?" मैंने कहा, "Manganese Constituencyसे।" श्रीगुरुजीने पूछा कि "उसमें कितने मजदूर काम करते हैं?" मैंने कहा, "**तीस हजार!**" उसपर उन्होंने पूछा, "भाई! एक प्रश्नका सीधा उत्तर दो, घुमाफिरा कर नहीं।" प्रश्न पूछा "यह जो तीस हजार मजदूर है, जिनके प्रतिनिधिके रूपमें तुम INTUCके General Councilमें चुने गये हो, क्या उनके प्रति तुम्हारे हृदयमें वही धारण है जो तुम्हारी माँको तुम्हारे प्रति है?" मैंने ईमानदारीसे कहा कि, नहीं। तब उन्होंने हँसकर कहा, "तुम इन्टकके जनरल काउन्सीलर हो सकते हो, भगवानके नहीं। हमें तो ऐसा आदमी चाहिये जो भगवानके जनरल काउन्सीलके लिये योग्य हों।" सभी क्षेत्रोंके विषयमें उनके मनमें स्पष्ट विचार थे।

दोष गलतकहमी फैलाने वालोंका

मुझे एक प्रसंगका स्मरण होता है। एक कम्युनीस्ट—साम्यवादी नेता प्रो. हीरेन मुकर्जीके साथ बातचीत हो रही थी और जब मैंने उनको कहा कि Property—संपत्तिके विषयमें हमारी यह भूमिका है, **यावत् भ्रीयते जठरं, तावत् स्वत्वं हि देहिनाम। अधिकं योऽभिमन्येत सस्तेनोदण्डमर्हति।** अपने शरीरकी आवश्यकतानुसार जो जितना अनाज अपने उदरमें लेता है इतनी ही संपत्ति धारण करनेका

व्यक्तिको अधिकार है। उससे अधिककी कामना करनेवाला चोर है और दण्डका पात्र है। उन्होंने पूछा, "क्या! यह **Mr. Golwalkar**ने कहा है?" तब मैंने कहा "वास्तवमें यह श्रीगुरुजीने कहा है। हम क्यों झूठ बोलें?" उन्होंने कहा, "माफ करना, हमारे मनमें जो उनकी **Image** है उससे यह मेल नहीं खाता।"

हमने कहा, "यह हमारी नहीं गलतफहमी फैलाने वालोंकी भूल है। अर्थक्षेत्रमें, सामाजिकक्षेत्रमें, उनका विचार था कि आर्थिक सत्ताका विकेन्द्रीकण हो, सामाजिक सत्ताका विकेन्द्रीकरण हो, शासकीय सत्ताका विकेन्द्रीकरण हो। झूठ फैलानेवाले कुछ भी कह सकते हैं। कहीं भी, व्यक्ति या व्यक्ति–समूहके बारेमें केन्द्रीयकरण नहीं।"

रोगसे खतरनाक ईलाज

आगे चलकर हमें कौनसी समाजरचना करनी चाहिये उनकी स्पष्ट कल्पना उनके मनमें थी। संघवाले तो अपने ही विचार बताते हैं। दूसरोंके विषयमें नहीं सोचते, ऐसा झूठ कुछ लोग फैलाते है। मगर आदर्श समाज रचना कैसी होगी, उसका विचार उन्होंने रखा।

पश्चिमके तथाकथित प्रगतिशील जो विचारक हैं उनको **Leftist** कहा जाता है। और सभी जानते हैं कि कहीं एक केन्द्र मान लिया जाय और उससे थोड़ा **Left** जायें तो **Socialism** और उससे और थोड़ा **Left** जानेसे **Communism** और उससे अधिक आगे जानेसे **Anarchism** कहते हैं। **Anarchism** श्रेष्ठ **Leftism** माना गया है।

Anarchism के प्रणेता **Bakunin** बाकुनीन और प्रोपोट्कीन **Propotkin** ने कहा कि खूनी क्रांतिके फलस्वरूप आज यदि शासन टूट जाता है तो स्वाभाविक रीतिसे शासन विहीन–स्वयंशासित समाजका निर्माण **Automatically** हो जायेगा।

कार्ल मार्क्सने भी **Higher Phase of communisam**में शासनविहीन सामाजकी कल्पना की, किंतु वे मानते थे कि क्रांतिके पश्चात्

केशव माधव ...
... २१ ... पाला

Automatically शासन विहीन समाजका निर्माण होगा और वह ठीक टिका रहेगा यह कहना अव्यवहारिक है। इस तरहकी समाज रचनाके लिये पर्याप्त पूर्व तैयारी चाहिए। इस पूर्व तैयारीके रूपमें उन्होंने Dictatorship of Proletariat की कल्पना की। इस डिक्टेटरशिप—तानाशाहीके द्वारा समाज स्वयंशासनके लिये तैयार हो जायेगा और उस अवस्थामें शासन स्वयम् अपनेको नष्ट कर देगा यह मार्क्सका विचार था, किन्तु अनार्किस्ट सोचते थे कि यह विचार भी उतना ही अव्यवहारिक है। एकबार तानाशाही स्थापित होनेके पश्चात् उसको अखण्ड बनाये रखनेकी चेष्टा सत्ताधारी करेंगे। तानाशाही स्वयम् अपनेको विसर्जित करेगी, यह कहना मनुष्य स्वभाव विषयक अज्ञानका ही परिचायक है। शासनका गुण है, Self perpetuation और Self expansion।

समाज रचनाकी सुस्पष्ट कल्पना

इस तरह दोनों विचार प्रणालियाँ एक दूसरेको गलत बताती थी। श्री गुरुजीका विचार था कि, दोनोंकी एक दूसरेके विषयमें की हुई टीका तथा उठाई हुई आपत्ति सही थी। 'बिना पूर्व तैयारीके क्रांतिके पश्चात् सीधे शासन विहीन समाजकी रचना संभव नहीं' यह मार्क्सका विचार तो श्री गुरुजी ठीक मानते थे; किन्तु मार्क्सकी बताई हुई उपाय योजना, यानि पूर्व तैयारीके रूपमें तानाशाहीकी स्थापना, यह भी गलत और खतरनाक है। A remedy worse than the diseases वे। कहते थे कि हिन्दुस्तानमें भी शासनविहीनताको आदर्श माना गया था।

न राज्यं नवराजाऽसीत न दण्डयो न च दाण्डिकः।
धर्मेणैव प्रजाः सर्वे रक्षन्तिस्म परस्परम्॥

यह प्राचीनकालके आदर्श समाजका वर्णन महाभारतके शांतिपर्वमें भीष्माचार्यने युधिष्ठिरको बताया। उस आदर्श अवस्थामें न कोई सामाजिक संविधान था, और न कोई Disciplinary Action की व्यवस्था

थी। संपूर्ण समाज स्वायत्त स्वयम शासित था। किन्तु इस अवस्थाकी पूर्व तैयारी थी, धर्मकी रक्षा।

सभी लोग यदि हृदयमें धर्मके संस्कार ग्रहण करते हैं, तो शासनविहीन या न्यूनतम शासनयुक्त समाज रचनाका निर्माण उनके लिये संभव होता है। श्री भीष्माचार्यने कहा, "**धर्मेणैव प्रजा सर्वेः रक्षन्तिस्म परस्परम्**"। धर्मके ही सहारे सब एक दूसरेकी रक्षा करते थे। यह धर्मका, समष्टिका, अंगांगी भावका यानि धार्मिकताका संस्कार व्यक्तिके हृदयमें अंकित करना, यही सही अर्थमें Anarchism की या न्यूनतम शासनयुक्त समाज रचनाकी पूर्व तैयारी है।

शासनविहीनता: हिंदु आदर्श

यहाँ यह दोंहरानेकी आवश्यकता नहीं कि धर्म यानि Religion नहीं, धर्म यानि Universal Laws; और उनके प्रकाशमें समय समय पर की गई समाज रचना। श्री गुरुजी जिस आध्यात्मिक Order के थे उसी Order की एक श्रेष्ठ कार्यकर्त्रि Margaret Noble उपाख्य Sister Niveditaने कहा है, "Hinduism is a fragment in a vast social-industrial-economic scheme called 'Dharma'. A man may well and rightly be the servant of 'Dharma' even without calling himself a Hindu". न्यूनतम शासनकी समाज रचना धर्मके आधार पर हो सकती है। यह एकमेव सनातन शास्त्रीय समाज है। यानि अति पुरातन होते हुए भी अति नूतन, अतः सनातन।

श्री गुरुजी राष्ट्रहितका सभी पहलुओंसे विचार करते थे। एक स्पष्ट चित्र उनके सामने था। सरकारके बारेमें, वे उसे राष्ट्र कार्यका साधन मात्र समझते थे। सभी राजनैतिक दलोंको समान दृष्टिसे देखते थे। राष्ट्रके प्राचीन आत्माकी जो प्रतिक्रिया सरकारके किसी नीति और कार्यके विषयमें किसी भी समय होती थी, वही प्रतिक्रिया उनकी होती

थी । न तो उन्हें प्रेम था, न विद्वेष । जो बातें राष्ट्रहितकी होती थी, उनकी प्रशंसा, और राष्ट्रहितके विरुद्ध थी, उनकी आलोचना करते थे ।

जब भारत स्वतन्त्र होने लगा, उस समय हमें मालूम है कि महात्माजीने श्री गुरुजीको बुलाया और कहा कि हमको तुम्हारा समर्थन प्राप्त होना चाहिये । श्री गुरुजीने **Law and order** कायम रखनेके लिये **without reservations** पूर्ण सहयोगका आश्वासन दिया । जब देशके विरोधी लोगोंके द्वारा दिल्लीमें शासन पलटनेका षडयन्त्र बन रहा था, तब सरदार वल्लभभाई पटेलको कहा और देशको बचाया । पूज्य महात्माजीने ११ सितम्बरको गुरुजीसे बातचीत की थी ।

सरकार : राष्ट्रकार्यका साधन मात्र

जिस समय संघ पर प्रतिबन्ध आया उस समय शासनके प्रमुख नेताके साथ जो पत्रव्यवहार हुआ वह हमारे सामने स्पष्ट रूपसे है । वास्तवमें घोर अन्याय हुआ था । कुछ दोष नहीं था। तो भी जानबूझकर **Pa ty Politics**के कारण संघको उसमें **involve**–समाविष्ट किया गया । उस पत्रव्यवहारमें विरोधकी छाया भी नहीं थी । उल्टे विशाल हृदयको धारण करते हुए पं. जवाहरलालजीको पत्रमें लिखा कि हम सबको मिलकर राष्ट्रका निर्माण करना है । शासकीय क्षेत्रमें आपका कार्य राष्ट्रहितम, सांस्कृतिक क्षेत्रमें हमारा कार्य, दोनों अपने अपने ढ़ंगसे राष्ट्रके निर्माणका प्रयास करें, और दोनोंमें **co-ordination** स्थापित करें, उसीमें राष्ट्रका हित निहित है । उस समय जब किसी भी सामान्य व्यक्तिके हृदयमें बदलेकी भावना आ सकती थी । प्रतिबन्धकी अवधिमें जो अन्याय संघ पर हुआ, उसके कारण **Rightcous indignation** मनमें आना अत्यन्त स्वाभाविक था । इतने कष्ट सहने पड़े । अकारण जानबूझकर अन्यायके फलस्वरूप । किन्तु श्री गुरुजीने उस समय अपने विशाल हृदयका, सच्चे राष्ट्रवादका परिचय दिया । जगह–जगह उन्होंने कहा, "जो हुआ सो हो गया, सरकार भी अपनी ही है । जिव्हा भी अपनी और दन्त भी अपने । अब तो **'वयम् पंचाधिकं शतम्'**

यह सूत्र ध्यानमें रखकर हम सब चले यही श्रेयस्कर हैं। व्यक्तिगत एवं संस्थागत अहंकार न रखते हुए संपूर्ण देशका, संपूर्ण राष्ट्रका विचार श्री गुरुजीने रखा।

गोवा सत्याग्रह हुआ तब पं. जवाहरलालजीको स्पष्ट संदेश दिया कि गोवाके लिये आप योजना बनायें, हम सब तिरंगेके नीचे, आपके नेतृत्वमें आगे बढेंगे। आप जितने चाहें उतने स्वयंसेवक मैं देता हूँ। आपका समर्थन हम करेंगे। छोटा दलगत विचार नहीं किया। संपूर्ण राष्ट्रका विचार किया।

श्री लालबहादुर शास्त्रीजीके साथ श्री गुरुजीके संबन्ध बहुत अच्छे थे। १९६५की भारत पाकिस्तानकी लड़ाईके समय संघने सरकारको पूर्ण सहयोग दिया। १९७१ में बंगला देशकी घटनाके पश्चात श्रीमती इन्दिरा गांधीको गुरुजीने पत्र लिखा। वह पत्र उनकी राष्ट्रीय मनोवृत्तिका परिचायक है। हमारे लिए आनंदकी बात है कि श्रीमती इन्दिराजीने भी बड़ा आत्मीयता-पूर्ण प्रत्युत्तर दिया। यह संतोषकी बात है।

सरदार पटेलके साथ उनका जो सम्बन्ध था उसे सभी जानते हैं। बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध था। जहाँ एक ओर कई बातोंमें प्रशंसा व सरकारका समर्थन किया, वैसे ही राष्ट्रहित विरोधकी बातें आईं, तो उनकी टीका और निषेध करनेमें कोई कसर नहीं रखी। न वे सरकारके समर्थक थे और न वे विरोधी ही थे। जैसे कहा है कि, **न मे द्वेषोऽपि न प्रियः।**

आज उनके सभी विचारोंका सिंहावलोकन करनेकी आवश्यकता हैं। उनका सच्चा जीवन-दर्शन करानेकी आवश्यकता है। जो गलतफहमियाँ उनके विषयमें हैं केवल उनका ही जिक्र कर रहा हूँ। हमारे एक ईसाई मित्रको इस बातसे बड़ा आश्चर्य हुआ जब उन्होंने गुरुजीके कमरेमें बाईबल देखी। उन्होंने कहा "हम तो समझते थे कि वे तो सब अहिंदू लोगोंके विरोधी हैं। यहाँ बाइबल कैसे?" हमने कहा, "देखिये, बाइबलके विषयमें जितना उनका अध्ययन है वैसा शायद ही किसी Bishop का

होगा। जिस कालेजमें वे पढ़ते थे. बाइबलके क्लासका पहला इनाम उन्हींको मिलता था, किसी Christianको नहीं! और ईसाको जितने अच्छे ढंगसे श्री गुरुजी समझते थे शायद हो और कोई इतने अच्छे ढंगसे समझता था। और कितने लोग उसको इतनी अच्छी तरह समझते हैं इस विषयमें मुझे शंका है।''

Father ! Forgive Them

मुझे एक प्रसंगका स्मरण होता है। संघ शिक्षावर्गका समारोह था। भाषणके लिये जानेसे कुछ पहले लोगोंने कहा, ''देखिये गुरुजी! यहाँ आपके विषयमें कई लोग निरर्थक आरोप लगाते हैं कि आप इसाईयों तथा मुसलमानोंके विरोधी हैं।'' यह बात उनके मनमें थी। समारोहके भाषणका दृश्य भी अच्छा था। पीछे भगवान सूर्यनारायण अन्तिम चरणोंमें थे। आकाशमें लालिमा थी। मनोरम दृश्य था और उस पृष्ठभूमिमें प. पू. श्री गुरुजीका वह चहेरा, दाढी है, जटा है और स्वयंसेवकोंके सामने खड़े है। श्री गुरुजीने कहा, ''देखो, हमारे बारेमें अनेक गलत बातें की जाती है। मैं उनके बारेमें एक बात कह सकता हूँ Father! forgive them, for they know not what they Say.''

मुझे स्मरण होता है कि नागपुरके एक अहिन्दू राजनैतिक नेताको मैं उस समय श्री गुरुजीके साथ मुलाकात करवाने ले गया था। एक घंटे तक बातचीत हुई। उसके बाद उन्होंने कहा कि गुरुजी आपके ऐसे विचार है, यह तो हमें पता ही नहीं, हमें तो ऐसा बताया गया है, वैसा बताया गया है। तब श्री गुरुजी हँस दिये। उन्होंने कहा, ''आप हँसते हैं जो लोग एसी बातें करते हैं उनके प्रति भी आप हँसते हैं?'' उन्होंने एक गाली भी दी क्योंकि वे एक Progrssive political leader थे और कहा, ''जो लोग गलत बातें करते हैं आपको तो चाहिये कि उन्हें 'ठीक' करे।'' तब श्री गुरुजीने पुनः हँसकर कहा, 'देखो, मेरी जो भूमिका है वह आप जानते हैं। I have come not to judge them but to serve them!''

Not to destroy

और एक जगह इसी तरह एक अहिन्दूके साथ बात चल रही थी। उसने पूछा, "संघके न होनेके कारण लोगोंका क्या नुकसान होगा?" बहुत कुछ तो गुरुजीने नहीं कहा। केवल इतना कहा, "आप एक बात याद रखिये—I have come to fuulfil, not to destroy"

अब यह सारे वाक्य जो स्वाभाविक रुपसे उनके मनमें आते थे यह किस प्रकारका मन था, कितना विशाल मन था उसका परिचायक है। तरह तरहकी भ्रांतियाँ उनके बारेमें हैं, उनको दूर करना और उनका सच्चा दर्शन लोगोंको कराना यह अब हमारा उत्तरदायित्व है और उसको पूरा करनेकी शक्ति वे देंगे ऐसा हमें पूरा बिश्वास है। आज उनकी मृत्युके बाद विभिन्न लोगोंके द्वारा जो बातें आ रही है, यह आश्चर्यजनक है।

निर्विवाद् श्रेष्ठत्व

एक कट्टर संघ विरोधी साप्ताहिकने अपने Editorial में जो श्रद्धांजलि दी, उसमें उनके जीवनका जो वर्णन है, वह इतने अच्छे शब्दोंमें है कि मैं आश्चर्यचकित रह गया। इससे यह सैद्धन्तिक रूपसे स्पष्ट हो जाता है कि किसीको मतभेद भले ही हो, परंतु, उनके व्यक्तित्वका जो श्रेष्ठत्व है, सभी लोगोने उसे स्वीकार किया, विरोधियोंने भी। उनकी मृत्युके पश्चात यह स्पष्ट होता है। वैचारिक मतभेद रहना चाहिये यह भी श्री गुरुजी कहते थे। हम Unity चाहते हैं उसका मतलब यह नहीं कि हम Uniformity of thought चाहते हैं। सबके विचार समान हो ऐसा हमारा मतलब नहीं। अलग-अलग वातावरण है, अलग-अलग स्तर पर लोग खड़े हैं, शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक रूपसे हर एकका अलग-अलग विचार हो सकता है। विचारोंमें वैशिष्ट्य भी होना चाहिये। लेकिन सारी विविधताओंको कायम रखते हुए भी कुछ जो common features हैं, common बातें हैं जैसे कि मातृभूमिके प्रति श्रद्धा, धर्म, संस्कृतिके प्रति श्रद्धा, इन बातों पर एकमत

होना चाहिये। इस तरह 'Unity in diversity' ही उनका विचार था। और कई बातों पर लोगोंने उनके साथ मतभेद रखे होंगे। उनमें असंतोषकी बात नहीं थी, दु खकी बात नहीं थी; लेकिन उनकी मृत्युके बाद जिस ढंगसे यह सारी प्रतिक्रियाएँ आ रही हैं, प्रत्यक्ष विरोध करनेवाले लोगों पर भी उनकी तपश्चर्या और व्यक्तित्वकी जो छाप उनके हृदय पर है, हमारे सामने प्रकट हो जाती है।

A Barrier

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरका कार्य तथा श्री गुरुजीका कार्य परस्पर पूरक होता तो अच्छा होता ऐसा विचार मेरे मनमें था। एकबार बाबाके साथ यह बात छिड़ी। उन्होंने हँसकर कहा, "देखो, तुम बच्चे हो। समझते नहीं। मेरी बात समझनेकी कोशिश करो।" Between the scheduled castes and Communism, Ambedkar is the barrrier; between the rest of the society ard Communism, Golwalkar is the barrier." पू. बाबासाहबके इस वाक्यका समझना राष्ट्रकी दृष्टिसे आवश्यक है।

यह बात उल्लेखनीय है कि विश्व बौधमहासभाके प्रधान मान्यवर U Chan Than जब भारतमें आये थे तव उनकी श्री गुरुजीके साथ प्रदीर्घ वार्ता हुई थी और दोनोंमें एकमत हो गया था कि जम्बूद्वीपमें (S. E. Asia) सनातन धर्मियोंकी एकता प्रस्थापित होनी चाहिए, सनातन धर्मके आधार पर। जैन मतके स्यादवादके वे कट्टर प्रशंसक थे। विश्वहिंदू परिषदके कार्यमें जैन तथा बौध आचार्योंको प्रविष्ट करानेमें उनके व्यक्तित्वका बहुत बड़ा हाथ रहा है।

In course of his very first visit at Calicut he so impressed the people that one of them (Shri P. K. M.

Raja an Advocate) remarked, "He is the highest personality of the mightiest Hindu organisation is his least qualification."

Blessings of Both

Some one has said, It is signifient that he served and attended upon both, Swami Akhandanandji and Dr. Hedgewarji in their last sickness. Did his work indicate the happy blending of the blessings of both? From Akhandananji he inherited among other things his 'KAMANDALU'; from Doctorji, the responsibility of Sarasanghhcalakship. He acquitted himself in the most creditable way in case of both these charges. Needless to add that his power of concentration, inspite of physical ailment or circumstantial diversion was proverbial.

He treated all his followers as his friends, and all his friends became volantarily his followers.

Of Julius Caesar it is recorded that he could call every one of his thousands of soldiers by his first name. Shai Guruji Could do this in case of lakhs of his friends and followers. A Nagpur Daily, which often indulged in criticism of R S. S., wrote in its leading article after his death that this became possible not merely due to his memory which was certainly extraordinary, but to the deep affection he felt for every one who came in his contact.

आध्यात्मिक भूमिका

उनका जीवन हमने देखा है। पार्थिव शरीरके नाते वे हमारे बीचमें नहीं हैं। लेकिन उनका जो यह संपूर्ण जीवन है, वह हमें मार्गदर्शन कर रहा है। ऐसी अखण्ड परिश्रमी कोई व्यक्ति नहीं जिसने इतने लम्बे अरसे तक लगातार इतना परिश्रम किया हो। सारा कार्य करते हुए भी अहंकारको कभी भी अपने मनमें नहीं आने दियो। प्रसिद्धिकी भी कभी लालसा नहीं रखी। यह कितनी बड़ी बात है, इसका हम विचार करें। उनसे कम कर्तृत्व करनेवाले लोग भी दौड़ जाते हैं अखबारोंके पास और रेडियोंके पास, कि 'हमारा नाम क्यों नहीं आता?' श्री गुरुजीने कभी भी अपने नामकी परवाह नहीं की। वह प्रसिद्धीकी लालच जिसे एक अंग्रेज कविने कहा Last spuz of the noble mind, कार्य प्रवृत्त होनेके लिये उसके भी उपर, एक आध्यात्मिक भूमिका होनेके कारण गुरुजी उठ सकते थे। इसलिये कि उनका मन आध्यात्मिक था। उच्च श्रेणीका था। और इसी कारण जैसे एक मराठी कविने कहा है,

"फुलें कुणाला वहायचीं तर पुढे समाधि बरोबरी
झर झर झर झर वाट चालतो तिथेंच त्याची वाट पहा।"

यदि आप किसीको फूलोंकी माला अर्पण करना चाहते हों तो वह माला आप उसकी समाधि पर ही समर्पण कीजिये, वह बड़ी तेजीके साथ अपनी समाधिकी ओर आगे बढ़ रहा है, आप वहीं उसकी प्रतीक्षा करें।

फूल चढ़ानेकी जगह भी न दी

जिस समय श्री गुरुजीका महानिर्वाण हुआ, यह कविता मुझे स्मरण हुई। लगा कि इस प्रसिद्धिपरांऽगमूख महापुरुषने, जिसने इतना तेजीसे

सारा कार्य किया है, शायद मनमें यही कहा होगा। किंतु जब श्री गुरुजीका एक अंतिम पत्र पढ़ा गया तो उसमें उनकी समाधि न बनानेका आपने आदेश दिया है। जीवनकालमें तो संमानको स्वीकार किया ही नहीं, मृत्युके पश्चात् समाधि पर भी फूल चढ़ानेका अवसर किसीको प्राप्त ही न हों यह भी व्यवस्था उन्होंने की।

Saint in hurry

उनका तेजीसे चलनेका ढ़ंग हम सबने देखा है। वे बड़ी फुर्तिसे चलते थे। मानो उनकी जो क्रियाशीलताथी उसीका प्रतिबिंब उनके चलनेमें प्रकट होता था। Saint Francis of Arsissiके बारेमें कहा जाता था कि, "He was a Saint in hurry"। श्री गुरुजीके बारेमें भी किसीने यही कहा है, "परिणामोंकी परवाह न करते हुए इसी जलदीके कारण अपने शरीरकी मोमबत्ती उन्होंने दोनों तरफसे जलाई।" कई बार लोगोंने आग्रह किया कि विश्राम लेना चाहिये। किन्तु वे कहते थे कि विश्रामतो आखिरमें लेंगे। बादमें बहुत विश्राम है।

How Lovely Light !

शरीर बहुत अस्वस्थ है यह जानते हुए भी वे यही बात कहते थे। केन्सरके ओपरेशनके पश्चात जिस ढ़ंगसे उन्होंने तेजीके साथ प्रवास तथा कार्यक्रम प्रारंभ कर दिये, उनसे यह लगता था कि उन्होंने अपने मन ही मन भक्त हनुमानकी तरह संकल्प किया होगा। भक्त हनुमानने कहा—

"रामकाज कीन्हें बिना अब मोहे कहाँ विश्राम" इसी तरह शायद श्री गुरुजीने कहा –

"राष्ट्रकाज कीन्हें बिना अब मोहे कहाँ विश्राम"। अविश्रांत परिश्रम करते करते उन्होंने देह त्याग किया। जैसे आगे कहा, वे अपनी मोमबत्ती दोनों ओरसे जला रहे थे। इस संदर्भमें मुझे एक अंग्रेजी कविता स्मरण हो रही है। जिसमें ठीक वो ही भाव निहित है, जो श्री गुरुजीके मनमें इस विषयमें होगा। पंक्तियाँ ऐसी हैं :—

"My candle burns at both ends,
It shall not Last the night;
But O'My foes and O'My friends,
How Lovely is the light !"

अपने शरीरके साथ अखंड घोर अन्याय करते हुए वे प्रकाश देते रहे, जो सभीका मार्गदर्शन करनेवाला था। जैसे जीवनकालमें वैसे मृत्युमें भी श्री गुरुजीने हमारे सामने एक आदर्श प्रस्तुत किया है।

हमसे दूर भी, पास भी

कई बार ऐसा कहनेकी पद्धति है कि सूर्यनारायण अब डूब गया, अब अन्धेरा हो गया। शायद हमारे भी मनमें ऐसे विचार आते हों। लेकिन हमारे सभी स्वयंसेवक बंधुओंको एक बात कहना चाहता हूँ। अपने एक क्षेत्रप्रमुख मा. श्री. बापुरावजी मोघे और मैं श्री गुरुजीकी अंतिम बिमारीके दिनोंमें उनके पास बैठे थे। उन्हें बोलनेकी मना ही थी। लेकिन एक बात उन्होंने कह ही डाली। उन्होंने कहा कि भगवान जिन महान आत्माओंको किसी न किसी जीवन-कार्यको देकर भेजता है, इस धरती पर उनका जीवन कार्य यदि पूरा नहीं हुआ और बीचमें ही देहत्याग करना पडे तो उन्हें मोक्ष प्राप्त न करते हुए उनका जो जीवन-कार्य अधूरा छूट गया हो उसे पूरा करने कि दिशामें प्रयत्नशील रहनेके

इलिये भगवान् कहता है, और जो लोग उसी कार्यको उठाये हुए हैं उनको प्रेरणा, प्रोत्साहन और मार्गदर्शन देकर उसे पूर्ण करनेका कार्य ये महान आत्माएँ अशरीरी अवस्थामें ही करती हैं। स्वामी विवेकानंदजीने शरीर त्याग दिया था, किन्तु महर्षि अरविन्दने ऐसा लिखकर रखा है कि जब वे जेलमें थे और उनके जीवनका सन्देश भगवान उनको दे रहा था, उस समय योगकी दीक्षा स्वामी विवेकानंदने अशरीरी अवस्थामें ही वहाँ आकर दी। जब कि स्वामीजीने तो कुछ वर्ष पूर्व ही देहका त्याग किया था, तब भी स्वामीजी यहाँ आते थे और उन्हें योगकी दीक्षा देते थे। तो इस तरह महान आत्माओंका जीवन कार्य पूर्ण होने तक वे कार्यरत ही रहती हैं और जीवन कार्य पूर्ण होनेके उपरान्त ही मोक्ष प्राप्तिकी अनुमति उन्हें मिलती है, पहेले नहीं। यह बात श्री गुरुजीने स्वयं कही है। मैं समझता हूँ कि जैसे कोई खास प्रसंग न था, शायद हम लोगोंको मार्गदर्शन करनेकी दृष्टिसे ही यह बात उन्होंने कही होगी।

अन्धेरा नहीं

लेकिन यदि इस दृष्टिसे भी देखा जाय तो सभी स्वयंसेवकोंको, सभी कार्यकर्ताओंको, इस बातका विश्वास हो जाता है कि श्री गुरुजीका पार्थिव शरीर नष्ट हुआ होगा, लेकिन उनकी आत्मा हमारे साथ है। जब तक उनका जीवन कार्य पूरा नहीं होता, तब तक हम सब लोगोंका मार्गदर्शन करनेके लिये जैसे पहले, वैसे आज भी, प. पू. गुरुजी हमारे बीचमें ही हैं। यह विश्वास हम सब लोगोंको हो रहा है। हाँ, फरक एक ही है, कि पहले उनकी आत्माको शरीरका बन्धन था इसलिये मनमें चारों ओर भले ही रहते थे लेकिन शरीर स्थानबद्ध था, किसी एक ही स्थान पर रह सकता था। यह जो शरीरका बन्धन था वह अब हट गया, और इसलिए उनकी अशरीरी आत्मा हम सभी स्वयंसेवक बंधुओंके

साथ एक ही समय रह सकती है। यह भी एक बात हम लोगोंके ध्यानमें आ सकती है और इसी दृष्टिसे सर्वसाधारणतया कहा जाता है कि अब अंधेरा हो गया है—ऐसा कहनेकी आवश्यकता नहीं।

पुनः डॉक्टरजी

उन्होंने जो अंतिम व्यवस्था हमारे लिये रखी है वह भी खूब सोच समझकर ही रखी है। वह हम सब लोगोंके लिये ठीक रहेगी। इसमें हमें कोई संदेह नहीं। नये सरसंघचालकके नाते मा. श्री बालासाहेब देवरसजीकी नियुक्ति प. पू. श्री गुरुजीने अपने अंतिम पत्रमें की है। प. पू. गुरुजीने मा. बालासाहेबके विषयमें पुना संघशिक्षा वर्गमें परिचय दिया, "आपमेंसे कुछ स्वयंसेवकोंने संघनिर्माता, प्रतिष्ठाता, संस्थापक प. पू. डॉक्टरजीको नहीं देखा। तो उनके मनमें वह इच्छा अधूरी रही होगी। प. पू. डॉक्टरजीका दर्शन कैसे होगा। अब तो हो नहीं सकता। उन्हें निराश होनेकी कि आवश्यकता नहीं। यदि किसीको भी यह देखना है कि प. पू. डॉक्टरजी कैसे थे, उनका व्यवहार कैसा था? तो मैं कहता हूँ आप मा. बालासाहेबकी ओर देखिये, आपको प. डॉक्टरजीका पूरा दर्शन हो जायेगा"

इस तरह ठीक नियुक्ति, ठीक योजना और उनकी आत्मा हमारे साथ है। इन सब बातोंका यदि हम विचार करते है तो निराश होनेकी बात नहीं। शोक होना स्वाभाविक है। शोकके कारण हमारा कोई कर्तव्य उनके प्रति है ऐसी भावना सजग रहेगी और हमारी भावपूर्ण श्रद्धांजलि क्रियाशीलताके द्वारा प्रकट होगी।

"मैं नहीं, तू ही"

महानिर्वाणके पूर्व प. पू. गुरुजीने हमारे लिए कौनसी वसीहत छोडी है यह जानना भी उचित होगा। श्री गुरुजीकी अंतिम यात्राके

समय पढ़े गये तीन पत्र और उनका थाणा संघ शिबिरका भाषण हमारे लिये उनकी वसीहत है। ये उनकी Public Testaments है। जैसे नेपोलियनका सेन्ट हेलिनाके टापूसे बंदी अवस्थामें अपने पुत्रको लिखा पत्र एक Political Testament माना जाता है, जैसे डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरजीका काठमण्डुका भाषण उनके Public Testment की योग्यता रखता है, वैसे प. पू. श्री गुरुजीका हमारे लिए जीवन संदेश क्या है यह इस प्रसंगमें स्पष्ट होता है। एक विद्वानको हस्ताक्षर देते समय श्री गुरुजीने लिखा है "मैं नहीं, तू ही", संपूर्ण आत्मसमर्पण। जैसे नारद भक्ति सूत्रमें कहा है **"तद् सुखेन सुखितम्"** To be happy in 'HIS' happiness, परमात्माके चरणोंमें सबकुछ समर्पण हम सब लोगोंके लिये यही उनके जीवनका मार्गदर्शक संदेश है, वसीहत है। इति शिवम्।

चाहिए आशीष माधव !

चाहिए आशीष माधव नम्र गुरुवर प्रार्थना ॥ ध्रु ॥

देव इंगित पर तुम्हारे ध्येय पथ पर बढ रहे हैं
आपसे ज्योतित अनेकों दीप अविचल जल रहे हैं
राष्ट्र मन्दिरका गहन तम शीघ्र ही मिटकर रहेगा
मातृमंदिरमे विभूषित दिव्य तव आराधना ॥१॥

संकटोंसे पूर्ण पथ पर पुण्य स्मृति तव मार्गदर्शक
फूल होंगे शल सारे मित्र होंगे सब विरोधक
दीजिये शक्ति ऋषिवर बढ़ सकें पथ पर निरंतर
कर सकें साकार गुरुवर आपकी हम कल्पना ॥२॥

शत्रुको भी जीतता था आपका चारित्र्य उज्वल
निन्दकों पर मात करता आपका व्यवहार निर्मल
मातृभू की वेदना जो आपके उरमें बसी थी
पा सकें अल्पांश भी तो पूर्ण होगी साधना ॥३॥

पूज्य केशव थे भगीरथ साथ लाये संघ-धारा
इष्ट उनको मान तुमने भाग्य भारतका संवारा
लक्ष्यकी द्रुत पूर्ति हो हम मांगते आशीष तुमसे
कर सके हम शीघ्र पूरी मातृभू की अर्चना ॥४॥

हमारे प्रकाशन

संघदर्शन	·५०
विचारधारा	·६०
आजनो धर्म	·२०
आपणा उत्सवो	१·००
गीत संग्रह	·५०
स्फूर्तिगान	·६५
जयगान	·५०
डॉ हेडगेवार	१·००
सामान्य ज्ञान	·१५
चर्चा विषयो	·५०
साम्यवाद कसोटिए	·६०
भारत भक्ति स्तोत्र	·२०
भारत भाग्य विधाता....	·१५
शिक्षकोने मार्गदर्शन	·४०
नवदधीचि हिन्दी	·७०

प्राप्तिस्थान :-

मधु प्रकाशन
चंपकलाल सुखड़ीया
६६, चौटापुल
सुरत-१.

जून 1973

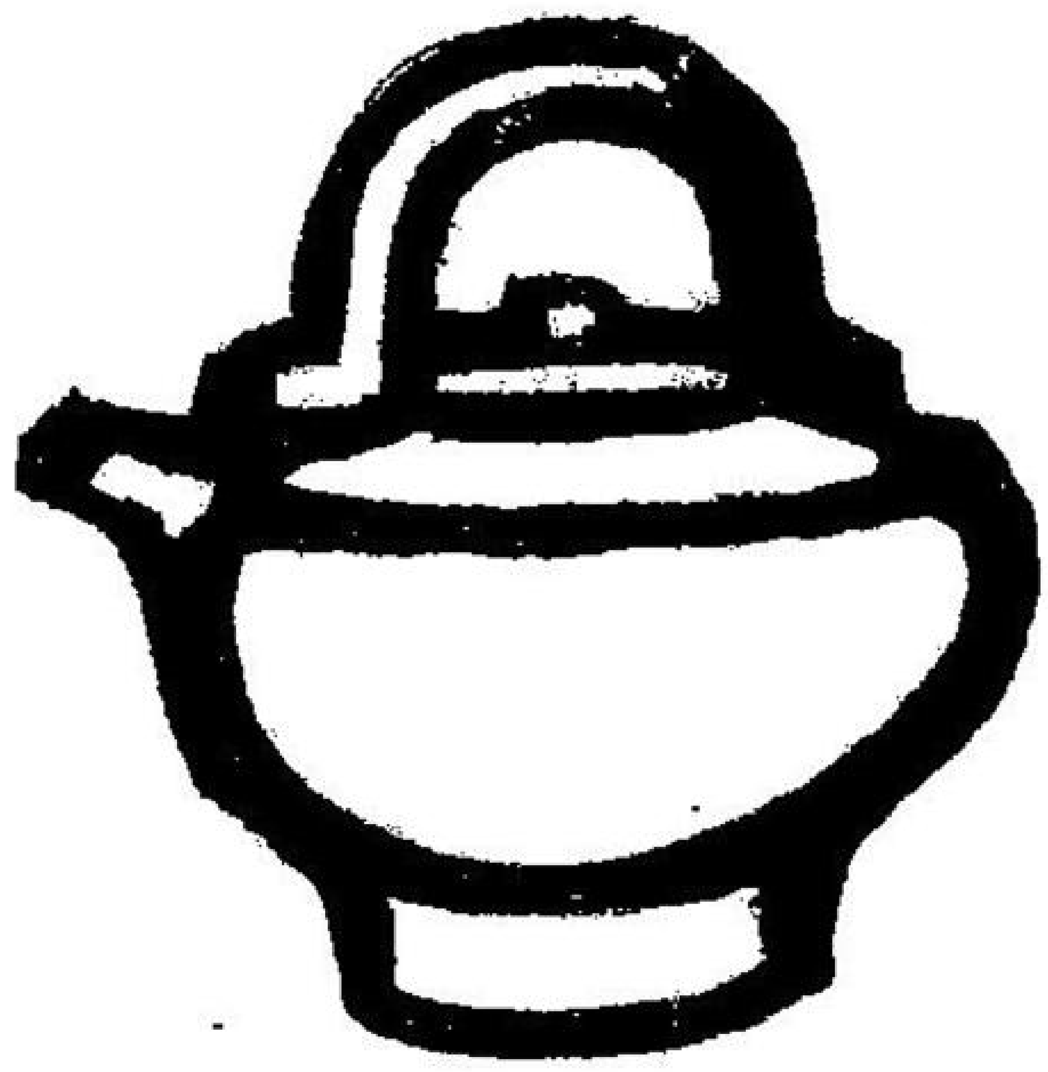

शीवरची मिनती । संतजनांचि परिभाषा ॥
विसरलो नाचडवार । पाइलदेवर तुम्हांसी ॥
आतां भार कोणांकाही । अवघें पायीं निवेदी ॥
तुका म्हणे पडलो पायां । करावें वावरा स्वरूपेचे ॥

म. रिंगाओकवाळ